मैसर्स सोमैया ऑर्गेनिक्स (इंडिया) लिमिटेड।

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

अप्रैल 17,2001

[बी. एन. किरपाल, सैयद शाह मोहम्मद कादरी, एम. बी. शाह, रूमा पाल और के. जी. बालाकृष्णन, न्यायमूर्तिगण]

आबकारी कानूनः उत्तर प्रदेश आबकारी अधिनियम, 1910: धारा 39.

आबकारी राजस्व – विक्रय शुल्क– ओद्योगिक शराब पर उदग्रहण –माननीय उच्चतम न्यायालय ने औधोगिक शराब पर विक्रय शुल्क को दिनांक 25.10.1989 से भविष्यलक्षी प्रभाव से अवैध घोषित किया –हालांकि राज्य द्वारा 25.10.1989 से पूर्व के विक्रय शुल्क की वसूली की मांग की गयी। वैधता –अवधारित–विक्रय शुल्क जो पहले से ही वसूल किया गया है कि उसे वापस नहीं किया जाएगा,–हालांकि, मांग की सूचना जारी होने के बावजूद राज्य कोई विक्रय शुल्क नहीं ले सकता है।

आबकारी राजस्व–विक्रय शुल्क–औद्योगिक शराब पर उदग्रहण–रिट याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान जमा किया गया विक्रय शुल्क– ऐसी जमा राशि को एक अलग खाते में रखा जाना था–इसके पश्चात, दिनांक 25.10.1989 से विक्रय शुल्क के उदग्रहण् को अवैध घोषित कर दिया गया।–जमा की वापसी की पात्रता–अवधारित–जमा,यू. पी.आबकारी अधिनियम के उद्देश्यों के लिए प्राप्ति हैं–इसलिए, ऐसी जमा राशि को वापस नहीं किया जाना चाहिए, यघपि उन्हें अलग खाते में रखा गया था।

आबकारी राजस्व विक्रय शुल्क–औद्योगिक शराब पर उदग्रहण्–रिट याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान प्रस्तुत की गई बैंक गारंटी–इसके पश्चात, विक्रय शुल्क के उदग्रहण् को दिनांक 25.10.1989 से भविष्यलक्षी प्रभाव से अवैध घोषित किया गया–बैंक गारंटी का अवलंब–अवधारित–बैंक गारंटी प्रस्तुत करना विक्रय शुल्क के भुगतान के बराबर नहीं है– इसलिए, राज्य बैंक गारंटी को भुनाने और 25.10.1989 से पहले की अवधि के संबंध में विक्रय शुल्क प्राप्त करने का हकदार नहीं है।

भारत का संविधान, 1950: अनुच्छेद 265।

"उदग्रहण्" और "संग्रह" का अर्थ है–अवधारितः 'उदग्रहण' का अर्थ है कर का निर्धारण या अधिरोपण या लागू करना– जबकि 'संग्रह' का अर्थ है उदग्रहित या अधिरोपित कर जो लगाया गया है ,की भौतिक प्राप्ति।–कर का संग्रह आम तौर पर उस के उदग्रहण के पश्चात होता है। –शब्द और वाक्यांश।

सिद्धांतः

संभावित अधिनिणर्य का सिद्धांत–इसकी प्रयोज्यता।

आवेदक ने औद्योगिक शराब का निर्माण किया, जिस पर उत्तर प्रदेश आबकारी अधिनियम, 1910 के तहत विक्रय शुल्क से छूट दी गई थी। बाद में उत्तरदाता राज्य ने औद्योगिक शराब पर विक्रय शुल्क के भुगतान से छूट वापस ले ली। इसे अपीलार्थी द्वारा चुनौती दी गई थी और उच्च न्यायालय ने एक अंतरिम आदेश द्वारा अपीलार्थी को बैंक गारंटी देने और/या देय राशि का भुगतान करने की अपेक्षा की; उत्तरदाता –राज्य को राशि को अलग खाते में रखने का निर्देश दिया।

इसके पश्चात *सिंथेटिक्स और केमिकल्स , [1990] 1 एस. सी. सी. 109* **(दूसरा सिंथेटिक्स मामला) के मामले में, इस न्यायालय ने औद्योगिक शराब पर भविष्यलक्षी रूप से अथार्त 25.10.1989 से विक्रय शुल्क लगाने के प्रावधान को रद्द कर दिया। हालांकि,उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी–राज्य 25.10.1989 से पहले की अवधि के लिए विक्रय शुल्क प्राप्त करने का हकदार था। इसलिए ये अपीलें की गयी।**

अपीलार्थी की ओर से यह तर्क दिया गया कि संविधान के अनुच्छेद 265 के तहत कानून के अधिकार के बिना कोई कर लगाया या एकत्र नहीं किया जा सकता था; कि अगर 25.10.1989 से पहले की अवधि के लिये कर लगाया गया था और/या मांग की गई थी, तो भी उससे पहले की अवधि के संबंध में उसे एकत्र नहीं किया जा सकता था; उन मामलों में जहां राज्य के पास इस शर्त पर धन जमा किया गया था कि उसे एक अलग खाते में रखा जाएगा और यह रिट याचिका के परिणाम के अधीन होगा, अपीलकर्ता उसके धनवापसी का हकदार होगा; और यह कि बैंक गारंटी देना कर के भुगतान के समान नहीं था और इसलिए, उत्तरदाता इसे भुनाने का हकदार नहीं था।

उत्तरदाता की ओर से यह तर्क दिया गया कि अपीलार्थी ने औद्योगिक शराब के विक्रय मूल्य निर्धारित करते समय देय विक्रय शुल्क के आंकड़े को ध्यान में रखते हुए राशि को प्राप्त किया और इसलिए, उत्तरदाता उस की वसूली करने का हकदार था क्योंकि अन्यथा इसके परिणामस्वरूप अनुचित संवर्धन होगा।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अवधारित किया

(कृपाल, जे, अपने लिए, कादरी, जे, शाह, जे और बालकृष्णन, जे)

1.संभावित अधिनिर्णय, शब्दावली होने पर भ्री, केवल इस सिद्धांत की मान्यता है कि, न्यायालय मामले में न्याय को पूरा करने के लिए दावा किये गये अनुतोष को ढालती है –न्याय अपने तार्किक रूप से नहीं बल्कि अपने न्यायसंगत अर्थों में। जहाँ तक इस देश का संबंध है, संविधान के अनुच्छेद 142 द्वारा स्पष्ट रूप से शक्ति प्रदान की गई है, जो इस न्यायालय को "ऐसी डिक्री पारित करने या ऐसा आदेश देने की अनुमति देता है जो उसके समक्ष लंबित किसी भी विषय या मामले में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक हो"। इस शक्ति का प्रयोग करते हुए, इस न्यायालय ने 'पूर्ण न्याय' करने के

लिए दावेदारों के पक्ष में रहने के बावजूद दावा किये गये अनुतोष को अक्सर अस्वीकार कर दिया है। [48–एफ]

आई. सी. गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य, [1967] 2 एससीआर 762; *इंडिया सीमेंट लिमिटेड बनाम तमिलनाडु राज्य,* [1990] 1 एस. सी. सी. 12; *उड़ीसा सीमेंट लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य,* [1991] 1 एस. सी. सी. 430*; भारत संघ बनाम मोहम्मद. रमजान खान,* [1991] 1 एस. सी. सी. 588*; प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल, हैदराबाद बनाम बी. करुणाकर,* [1993] 4 एस. सी. सी. 727; *सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ,* [1998] 4 एस. सी. सी. 409*; नारायणबाई बनाम महाराष्ट्र राज्य,* [1969] 3 एस. सी. सी. 468 *और अशोक कुमार गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1997]* 5 एस. सी. सी. 201, *संदर्भित।*

2.1 . संविधान के अनुच्छेद 265 में उपयोग किए गए शब्द 'उदग्रहण्' और' ' संग्रह' है। कराधान कानून में 'उदग्रहण्' और' 'संग्रह' शब्द समानार्थी शब्द नहीं हैं। जबकि 'उदग्रहण्' का अर्थ कर का निर्धारण या अधिरोपण् या लागू करना होगा, अनुच्छेद 265 में 'संग्रह' का अर्थ होगा उदग्रहित या अधिरोपित कर जो लगाया गया है, की भौतिक प्राप्ति।–कर का संग्रह आम तौर पर उस के उदग्रहण के पश्चात होता है। कर की भौतिक प्राप्ति, जो लगाया या लगाया जाता है। कर का संग्रह आम तौर पर इसके उदग्रहण के बाद का एक चरण होता है । उदग्रहण् के प्रवर्तन का अर्थ केवल अधिरोपित या मांगे गए कर की प्राप्ति हो सकती है।[49–एफ]

सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1990] 1 एस. सी. सी. 109,का अनुसरण किया ।

सच्चिद हुसैन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (रिट याचिका सं। 7452/ 1981 और 3571/ 1982 का एस. सी. द्वारा दिनांक 26.2.1990 पर निर्णित); *यावर अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* (1981 की रिट याचिका संख्या 8435 एस. सी. द्वारा दिनांक 12.3.1990 पर निर्णित) *और बेलसुंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य,* [1999] 9 एस. सी. सी. 620, *पर निर्भर किया ।*

केंद्रीय उत्पाद शुल्क के कलकत्ता खंड के सहायक कलेक्टर, बनाम राष्ट्रीय टोबैको कं. ऑफ इंडिया लिमिटेड, [1972] 2 एस. सी. सी. 560, संदर्भित

2.2 . यह सत्य है कि समान अवधि अर्थात 25.10.1989 से पहले के संबंध में जिन व्यक्तियों ने स्थगन आदेश प्राप्त किए थे या अन्यथा शुल्क का भुगतान नहीं किया था, वे उन लोगों की तुलना में बेहतर होंगे जिन्होंने सरकार को राशि जमा की है और कोई धनवापसी प्राप्त करने के हकदार नहीं हैं। हालाँकि, यह स्थिति इस साधारण कारण से अपरिहार्य है कि अनुच्छेद 265 कानून के अधिकार के बिना कर का संग्रह की अनुमति नहीं देता है। भले ही 25.10.1989 से पहले लगाया गया शुल्क वैध

हो सकता है लेकिन जब वास्तव में उक्त शुल्क के अनुसरण में कोई संग्रह नहीं किया गया था, तो निर्णय के बाद संग्रह की अनुमति नहीं है। 25.10.1989 के बाद कोई वैध कानून अस्तित्व में नहीं था, जो कर संग्रह की अनुमति देता था। 25.10.1989 के बाद यू. पी. आबकारी अधिनियम, 1910 की धारा 39 के प्रावधान जो आबकारी राजस्व की वसूली का प्रावधान करता है, लागू नहीं होंगे । [52–एफ–जी]

सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1990] 1 एस. सी. सी. 109 और *एम. पी. वी. सुंदररामियर एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य,* [1958] एस. सी. आर. 142, संदर्भित।

3. प्रस्तुत की गई बैंक गारंटी को उदग्रहित कर का भुगतान नहीं माना जा सकता है, जिसे सरकार अपने पास रखने की हकदार है। बैंक गारंटी देने का आदेश सामान्य रूप से बकाये का संग्रह सुनिश्चित करने के लिए दिया जाता है। हालाँकि, जहाँ वर्तमान मामले की तरह, राज्य को 25.10.1989 के बाद विक्रय शुल्क एकत्र करने या प्राप्त करने का हकदार नहीं माना गया है, वहाँ उसे बैंक गारंटी का आह्वान करने और विक्रय शुल्क की राशि प्राप्त करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। जो प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता है वह अप्रत्यक्ष रूप से भी नहीं किया जा सकता है। बैंक गारंटी देना , केवल बैंक द्वारा बैंक गारंटी में निहित कुछ परिस्थितियों में लाभार्थी को राशि का भुगतान करने का वचन है। बैंक गारंटी देना भुगतान करने के समान नहीं हो सकता है क्योंकि यह विक्रय शुल्क के भुगतान से बचने के लिए था, कि बैंक गारंटी जारी की गयी । इसलिए, उत्तरदाताओं को बैंक गारंटी को भुनाने और 25.10.1989 से पहले की अवधि के संबंध में विक्रय शुल्क प्राप्त करने का अधिकार नहीं है। [53–एफ]

ओसवाल एग्रो मिल्स लिमिटेड बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क लुधियाना, खंड के सहायक कलेक्टर, [1994] 2 एस. सी. सी. 546, पर निर्भर किया ।

4.1 . यह सत्य है कि विधायी योग्यता के बिना एक कानून का प्रभाव यह है कि वह कुछ भी नही है। फिर भी, विधायी योग्यता के बिना अधिनियमित एक कानून तब तक क़ानून की पुस्तक में बना रहता है, जब तक सक्षम क्षेत्राधिकार का न्यायालय उस पर निर्णय नहीं लेता और इसे शून्य घोषित नहीं करता। जब न्यायालय इसे अमान्य घोषित करता है तो केवल तभी यह कहा जा सकता है कि यह सभी उद्देश्यों के लिए कुछ नहीं है। दूसरे सिंथेटिक्स और केमिकल्स मामले में प्रावधानों की अवैधता संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत एक घोषणा थी। यह पूर्ण न्याय करने के लिए था कि न्यायालय ने अनुच्छेद 142 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए अनुतोष् को इस तरह से ढाला कि इसकी घोषणा को भविष्यलक्षी रूप से प्रभावी बनाया जा सके। यह स्वीकार करना संभव नहीं है कि संभावित अधिनिर्णय का ऐसा आदेश कानून के विपरीत है। एक अवैध् कानून को वैध नहीं

माना गया है। जो कुछ हुआ है वह यह है कि कानून की अवैधता की घोषणा को भविष्य की तिथि से प्रभावी होने का निर्देश दिया गया था। [54–बी–सी]

4.2 संभावित अधिनिर्णय का सिद्धांत इस देश के न्यायशास्त्र में उसमें विघ्न करने के लिए बहुत अच्छी तरह से संजोया गया है। इसलिए, दूसरे सिंथेटिक्स मामले में निर्णय के कारण वास्तव में जो हुआ वह है, 25.10.1989 से पहले विक्रय शुल्क का संग्रह और गैर–संग्रह अछूता रह गया । हालांकि, दूसरे सिंथेटिक्स मामले में न्यायालय ने विशिष्ट रूप से न्यायालयों के अंतरिम आदेशों के अनुसार की गई जमा राशि के प्रश्न पर विचार नहीं किया। वहाँ उपयोग किया गया 'प्राप्ति' शब्द इस अर्थ में था कि इस शब्द का उपयोग सामान्य रूप से कराधान कानूनों और विशेष रूप से यू. पी. आबकारी अधिनियम, 1910 में किया गया है। हालांकि, उच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश से पता चलता है कि निक्षेप , विक्रय शुल्क और क्रय कर से बनाए गए थे। हालाँकि इन 'निक्षेपो' को एक अलग खाते में रखा जाना था,फिर भी इस मामले की परिस्थितियों में, यह मानना केवल कुतर्क होगा कि इस तरह जमा किए गए धन यू. पी. आबकारी अधिनियम के उद्देश्यों के लिए 'प्राप्ति' नहीं थे। इसलिए, इसके बावजूद कि, अंतरिम आदेश जिसमें राज्य को इसे एक अलग खाते में रखने की आवश्यकता थी, अपीलार्थियों द्वारा राज्य के पास जो जमा किया गया था, वह उसके पास ही रहेगा ,परन्तु साथ ही, राज्य द्वारा जो संग्रह नहीं किया गया है, उसे उन मामलों में भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है, जहां बैंक गारंटी दी गई थी। [54–डी–एफ]

बेहराम खुर्शीद पेसिकाका बनाम बॉम्बे राज्य, [1951] 1 एस. सी. आर. 613, आर. एम. डी; *चमरबोगवाला बनाम भारत संघ,* [1957] एस. सी. आर. 930; *एम. पी. बनाम सुंदररामियर एंड कंपनी,* [1958] एससीआर 1422 और *महेंद्र लाल जेलनी बनाम यू. पी. राज्य,* [1963] 1 एस. सी. आर. 912 पर निर्भर किया गया।

सिंथेसिस एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1990] 1 एस. सी. सी. 109, स्पष्ट किया ।

5. दूसरे सिंथेसिस मामलें में, दिये गये निर्देश कि, वापसी नही होगी के दृष्टिगत, अन्यायपूर्ण संवर्धन का सिद्धांत वर्तमान में लागू नहीं होता है। यह अन्यायपूर्ण संवर्धन के सिद्धांत के अनुरूप है। परन्तु इस सिद्वान्त का राज्य को संविधि के समाप्त होने के पश्चात विक्रय शुल्क वसूल या प्राप्त करने के लिये अधिकार प्रदान करने के लिये विस्तार नही किया जा सकता तथा यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि "उत्तरदाता राज्य को उक्त शुल्क को आगे लागू करने से रोक दिया गया है।"..... इसलिए, उपरोक्त दिशानिर्देश् में उत्तरदाताओं के तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह इस तथ्य के है कि ऐसा कोई तथ्यात्मक आधार नहीं है जिसके आधार पर यह न्यायालय यह निष्कर्ष

निकाल सके कि अपीलकर्ताओं ने वास्तव में विक्रय शुल्क की राशि को प्राप्त कर लिया है और उन्हें इसे रखने की अनुमति देने के परिणामस्वरूप वे अन्यायपूर्ण रूप से समृद्ध होंगे। [55–B–C]

मफतलाल इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम भारत संघ, [1997] 5 एस. सी. सी. 536, [2001] 3 एस. सी. आर. अवधारित अप्रयुक्त।

सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1990] 1 एस. सी. सी. 109, स्पष्ट किया ।

6. राज्यों द्वारा प्राप्त विक्रय शुल्क को वापस नहीं किया जाना है। अपीलार्थी और, साथ ही, राज्य, बावजूद इसके कि हो सकता है कि मांग जारी की गई हो या वसूली की कार्यवाही शुरू की गई हो, राज्य 25.10.1989 से पहले या उसके बाद की अवधि के लिए कोई विक्रय शुल्क संग्रह नहीं कर सकता है। [55–डी]

सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1980] 2 एस. सी. सी. 441 और *हिंदुस्तान शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* [1994] 4 एस. सी. सी. 149, संदर्भित।

रूमा पाल, जे के अनुसार। (पूरक):

1. भविष्यलक्षी अधिनिर्णय द्वारा न्यायालय दावेदार के पक्ष में रहने के बाद भी, दावा की गई राहत प्रदान नहीं करता है ,दूसरे सिंथेटिक्स मामले में, न्यायालय ने अवधारित किया कि विक्रय शुल्क लगाने वाला वैधानिक प्रावधान अमान्य था। कड़ाई से कहें तो यह अपीलार्थी को विक्रय शुल्क के रूप में एकत्र की गई सभी राशियों के उत्तरदातागण से

धनवापसी का हकदार बनाता। लेकिन क्योंकि, जैसा कि दूसरे सिंथेटिक्स निर्णय में ही कहा गया है, कुछ समय के लिए पूर्व निर्णय के आधार पर अधिरोप और शुल्क लगाए गए थे और राज्य के साथ–साथ याचिकाकर्ताओं और निर्माताओं ने अपने अधिकारों ओर स्थिति को समायोजित किया था उस आधार पर, इस राहत को अस्वीकार कर दिया गया था। न्यायालय ने राहत से इनकार करके, जिसे अवैध या अमान्य घोषित किया गया था, उसे अधिकृत या मान्य नहीं किया और न ही उसने निर्णय की तारीख तक विधायिका को क्षमता प्रदान की। [56–E–F]

सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम राज्य यू. पी., **[1990] 1 एस. सी. सी. 109, का अनुसरण किया**

प्रेम चंद गर्ग बनाम आबकारी आयुक्त, **[1963] 1 एस. सी. आर. 885** और *सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ,* **[1998] 4 एस. सी. सी. 409, को संदर्भित** ।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार 1991 की सिविल अपील सं. 4093

सी. एम. डब्ल्यू. 1979 के सं. 487 में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांकित 29.8.90 से

साथ में

सिविल अपील सं 2001 का 2853, 1981 का 324, 1980 का 455, 2795, 1604, 624, 625, 125, 2049 का 1981, आई. ए. सं. 1 व 3 डब्ल्यू. पी. में (ग) 1973 का सं. 1892, सी. ए. सं. 1122, 1981 का 181, एस. एल. पी. (सी) सं. 4181, 1980 का 4297–4298, सी. ए. सं. 1981 का 215, 341, टी. सी. सं. 1989 का 37–39 सी.ए. 1981 का सं. 2777 और 1980 का 1607।

उपस्थित पक्षों के लिए आर. एफ. नरीमन, एफ. एस. नरीमन, के. के. वेणुगोपाल, राकेश द्विवेदी, दिनेश द्विवेदी, डी. एम. पोपट, अमृत ढींगरा, जुल्फिकार कुमार शफी, पी. एच. पारेख, शाहिद रिज़वी, जी. के. कुमार, के. सी. दुआ, वाई. पी. महाजन, अरविंद मिनोचा, तरुण दुआ, मेसर्स। ओ. पी. खेतान एंड कंपनी मेसर्स के लिए (एन. पी.), ई. सी. अग्रवाल, महेश अग्रवाल, ऋषि अग्रवाल, सुमित लाल, अश्विनी कुमार, सुनील गुप्ता, सुश्री ए. के. वर्मा, जनेश बवेजा। जे. बी. डी. एंड कंपनी, श्री नारायण, संदीप नारायण, मेसर्स। अंजलि, एच. के. पुरी, एस. के. पुरी, उज्ज्वल, बनर्जी, राजेश श्रीवास्तव, के. के. मोहन (एन. पी.) सुश्री विमला सिन्हा, सुश्री निरंजना सिंह, विश्वजीत सिंह, सुश्री संगीता शर्मा, कमलेंद्र मिश्रा, आर. बी. मिश्रा, आर. सी. वर्मा, विवेक विश्नोई, राकेश टिक्कू, अरुण के. सिन्हा, गुंटूर प्रभाकर (एन. पी.), एस. सी. पटेल (एन. पी.) और अशोक के. श्रीवास्तव (एन. पी.)।

न्यायालय के निर्णय **किरपाल, जे** द्वारा दिए गए थे

सिविल अपील सं. 4093 सन 1991 और सी ए संख्या 2853 सन 2001

(एस.एल.पी.(सी)सं.20018 सन 1991 सेउद्भूत।

एस. एल. पी. (सी) सं. 20018 सन 1991 में अनुमति दी गई ।

ये अपीलें सिंथेटिक्स तथा केमिकल्स लिमिटेड और अन्य बनाम यू. पी. और अन्य(1) में इस न्यायालय के फैसले की अगली कड़ी हैं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि औद्योगिक शराब के संबंध में राज्यों को उस कर को लागू करने के लिए अधिकृत नहीं किया गया था जो उन्होंने करने का इरादा किया था। 25 अक्टूबर, 1989 को दिए गए उस फैसले द्वारा न्यायालय ने उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड और अन्य(2) के मामले में अपने पहले के फैसले को खारिज कर दिया। जिसमें इस तरह के कर की वैधता को बरकरार रखा गया था। दूसरे सिंथेटिक्स मामले में यह घोषित किया गया था कि आक्षेपित प्रावधान भावी रूप से अवैध थे।

1. (1990)1 एस०सी०सी० 149, 2. (1980)2 एस०सी०सी० 441

इन अपीलों में विचार के लिए जो प्रश्न उठता है वह यह है कि क्या विक्रय शुल्क जो उपयुक्त राज्य अधिनियमों द्वारा लगाया गया था, परन्तु न्यायालय के आदेशों के या अन्यथा कारणों से एकत्र नहीं किया गया है अब, जबकि 25 अक्टूबर, 1989 के उक्त निर्णय द्वारा उक्त प्रावधानों को भावी रूप से अमान्य माना गया है, एकत्र किया जा सकता है ।

सुविधा के लिए, हम संक्षेप में सी. ए. 1991 का सं. 4093 सोमैया ऑर्गेनिक्स (इंडिया) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश और अन्य के तथ्यों का उल्लेख करेंगे। उक्त कंपनी ने मध्यस्थ से औद्योगिक शराब के उत्पादन के लिए बाराबंकी में एक संयंत्र स्थापित किया था। इसकी प्रवर्तक कंपनी ने केपटेनगंज में स्थित शराब की निमार्णशाला अपीलकर्ता उद्योग को बेच और स्थानांतरित कर दिया था। कप्तानगंज की शराब की निमार्णशाला द्वारा निर्मित औद्योगिक शराब सीमित उपभोग की थी । 8 अक्टूबर, 1970 को अपीलार्थी को विक्रय शुल्क का भुगतान करने से छूट दी गई थी जो यू. पी. आबकारी अधिनियम, 1910 के तहत देय था।

9 अक्टूबर, 1979 को, यू. पी. राज्य ने औद्योगिक शराब पर विक्रय शुल्क/खरीद कर का भुगतान से छूट वापस ले ली।अपीलार्थी द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर करके इसे चुनौती दी गई थी। रिट याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान उच्च न्यायालय द्वारा अंतरिम आदेश पारित किए गए थे जिसके तहत याचिकाकर्ताओं को बैंक गारंटी देने की आवश्यकता थी और/या न्यायालय द्वारा निर्देशित राशि का भुगतान राज्य को करें, जिसे पहले के एक आदेश में, उच्च न्यायालय ने यह निर्देश दिया था कि इसे राज्य द्वारा एक अलग खाते में रखा जाना चाहिए।

जैसा कि यहाँ ऊपर देखा गया है, इस न्यायालय की एक खंड पीठ के 19 दिसंबर, 1979 को प्रस्तुत किए गए पहले सिंथेटिक्स और केमिकल्स मामले के निर्णय के द्वारा कर की वैधता को बरकरार रखा गया था। इसके बाद, दूसरे सिंथेटिक्स के मामले को सात न्यायाधीशों की पीठ को भेजे जाने पर, 1989 में फैसले द्वारा विक्रेय शुल्क के रूप में उत्पाद शुल्क लगाने की अनुमति देने वाले उक्त अधिनियमों के प्रावधानों की वैधता को भावी रूप से रद्द कर दिया गया था।

उच्च न्यायालय ने सोमैया के मामले में 29 अगस्त, 1990 के आक्षेपित निर्णय द्वारा दूसरे सिंथेटिक्स मामले में भविष्यलक्षी घोषणा से संबंधित दिए गए निर्देश की व्याख्या करते हुए कहा कि 25 अक्टूबर, 1989 से पहले की अवधि के लिए इसके संबंध में देय राशि की वसूली की जा सकती है। इसने अभिनिर्धारित किया कि एक बार 25 अक्टूबर, 1989 से पहले की अवधि के लिए उदग्रहण को सुरक्षित कर लिया गया था, इस तरह के उदग्रहण के परिणामस्वरूप आगे के कदमों को समान रूप से सुरक्षित किया गया था और 25 अक्टूबर, 1989 से पहले के बकाया के संबंध में राज्य द्वारा

वसूली की जा सकती थी। राज्य को 25 अक्टूबर, 1989 से पहले की अवधि के लिए विक्रय शुल्क प्राप्त करने का हकदार माना गया था।

जब उक्त निर्णय के खिलाफ ये अपीलें इस न्यायालय में सुनवाई के लिए आईं, एक खंड पीठ ने हिंदुस्तान शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम यू.पी राज्य और अन्य(1) में 26 अप्रैल, 1994 के अपने आदेश के माध्यम से पाया कि दूसरे सिंथेटिक्स मामले में दिए गए निर्देश और अवलोकन इस न्यायालय की पीठों द्वारा अलग अलग समझा गया। इस स्पष्ट संघर्ष को देखते हुए इन अपीलों को एक बड़ी पीठ को भेजा गया था। इसके अनुसरण में इन अपीलों पर सुनवाई की गई है।

अपीलार्थियों के वरिष्ठ वकील श्री के. के. वेणुगोपाल ने तर्क दिया कि औद्योगिक शराब के संबंध में राज्य विधानमंडल को उत्पाद शुल्क या उस प्रकार का कोई कर लगाने की कोई विधायी क्षमता नहीं है। सूची 2 की प्रविष्टि 8 और 51 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हुए उन्होंने कहा कि राज्य केवल पीने योग्य शराब पर उत्पाद शुल्क लगा सकते हैं। इसके अनुरूप सूची । में प्रविष्टि 84 है जो संसद को सूची ॥ की प्रविष्टि 51 में निर्दिष्ट वस्तुओं के अतिरिक्त उत्पाद शुल्क लगाने में सक्षम बनाती है। इसके अलावा सूची । की प्रविष्टि 52 के तहत आई. डी. आर. अधिनियम संसद द्वारा प्रख्यापित किया गया था और पहली अनुसूची की मद संख्या 26 में किण्वन उद्योगों से संबंधित था। पहली अनुसूची में आई. डी. आर. अधिनियम में निर्दिष्ट उद्योगों के संबंध में कर लगाने का अधिकार केवल संसद के पास है। इस प्रकार राज्यों द्वारा औद्योगिक शराब पर विक्रय शुल्क लगाना वैध नहीं था।

यह भी तर्क दिया गया था कि अनुच्छेद 162 प्रावधान करता है कि राज्य की कार्यकारी शक्ति उसकी विधायी शक्ति के सहव्यापी है । जैसे राज्य सूची 2 की प्रविष्टि 51 की परिधि से बाहर होने के कारण ओघोगिक शराब पर उत्पाद शुल्क नही लगा सकता ,राज्य सरकार अपनी कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग कर, उत्पाद शुल्क वसूल नही कर सकती । 25 अक्टूबर, 1989 के बाद से विधायी क्षमता के अभाव के कारण ओघोगिक शराब पर उत्पाद शुल्क के उदग्रहण ओर संग्रह के सम्बन्ध में विधि का अस्तित्व समाप्त हो गया । इस प्रकार राज्य सरकार कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग ओर ओघोगिक शराब पर उत्पाद शुल्क संग्रह नही कर सकती ।

यह तर्क दिया गया कि संविधान के अनुच्छेद 265 के तहत कानून के प्रधिकार के बिना कोई कर लगाया या एकत्र नहीं किया जा सकता है। तर्क यह था कि कानून के अधिकार का अर्थ है कि एक वैध अधिनियम होना चाहिए जो कर लगाने और संग्रह करने के लिए अधिकृत करे। किसी भी वैधानिक प्रावधान के अभाव में न्यायालय के निर्णय के आधार पर कर लगाया और एकत्र नहीं किया

1.(1994)4 एस०सी०सी० 149

जा सकता है। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला में, उदाहरणों में से एक एम. पी. वी. सुंदररामियर एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य(1) में यह अभिनिर्धारित किया था कि विधायी क्षमता की कमी के कारण जिस कानून को अधिकार से बाहर घोषित किया गया है, वह शुरू से ही अमान्य होगा और उसे लागू नहीं किया जा सकता है। सिंथेटिक्स मामले में दूसरे निर्ण्य का प्रभाव यह था कि 25 अक्टूबर, 1989 के बाद कोई उदग्रहण् या संग्रह नहीं हो सकता । 25 अक्टूबर, 1989 से पूर्व की अवधि के संबंध में, यद्यपि कर लगाया गया हो और/या मांग उठाई गई हो, परंतु विद्वान अधिवक्ता का तर्क यह था कि इसे एकत्र नहीं किया जा सकता । उत्तरदाताओं की ओर से श्री राकेश द्विवेदी ने इसका प्रतिवाद किया।

प्रावधानों को भविष्यलक्षी रूप से अवैध घोषित करने का अर्थ यह है कि 25 अक्टूबर, 1989 से पहले सभी प्रावधान वैध थे। उन्होंने कथन किये कि इसका अर्थ यह है कि उक्त प्रावधान उक्त तिथि से पूर्व की अवधि के लिए लागू किए जाने में सक्षम थे। उन्होंने तर्क दिया कि औद्योगिक अल्कोहल जारी होते ही विक्रेता शुल्क का भुगतान करने का दायित्व आकर्षित हो जाता है। चूँकि यह 31 मई, 1979 और 25 अक्टूबर, 1989 की अवधि के दौरान जारी किया गया था, इसलिए अपीलकर्ता विक्रेता शुल्क का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हो गए थे। एक बार 25 अक्टूबर 1989 से पहले की यह देनदारी वैध मानी जाती है तो राज्य इसे वसूलने का हकदार था। उन्होंने उच्च न्यायालय के तर्क पर दृढ़ता से विश्वास किया, जिसमें कहा गया था कि यह अनुचित होगा यदि दूसरे सिंथेटिक्स मामले में टिप्पणियों को संभावित ओवररूलिंग के बावजूद अपीलकर्ताओं को विक्रेता शुल्क बनाए रखने का अधिकार माना जाना अनुचित होगा, क्योंकि जिन्होंने विक्रेता शुल्क का भुगतान किया है अंतरिम आदेशों के मद्देनजर विक्रेता शुल्क का भुगतान नहीं करने वालों की तुलना में समान अवधि नुकसानदेह स्थिति में होगी, हालांकि दोनों ही मामलों में कर की देनदारी शराब जारी करने के

समय उत्पन्न होती है। यह तर्क दिया गया कि इस तरह की व्याख्या मनमानी होगी और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगी।

संभावित अधिनिर्णय का सिद्धांत केवल समानता पर आधारित था और उस पर पूर्ण प्रभाव दिया जाना चाहिए और राज्य को 25 अक्टूबर, 1989 से पहले की अवधि के संबंध में अवैतनिक उदग्रहण की वसूली करने की अनुमति दी जानी चाहिए। श्री द्विवेदी ने आगे कथन किये कि किसी भी मामले में उच्च न्यायालय के अंतरिम आदेशों के तहत किए गए भुगतान को राज्य द्वारा बरकरार रखा जा सकता है और यह दूसरे सिंथेटिक्स मामले में फैसले के प्रस्तर 89 में इस न्यायालय के निर्देशों से स्पष्ट रूप से प्रवाहित होता है। विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि बैंक गारंटी द्वारा सुरक्षित की गयी धनराशि के संबंध में भी राज्य उसे एकत्र करने का अधिकारी होगा।

1.(1958)4 एस०सी०आर० 1422

वर्तमान मामले में, कुछ अन्य राज्यों की तरह, उत्तर प्रदेश राज्य ने भी यूपी उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1910 के तहत औद्योगिक शराब के संबंध में बिक्री शुल्क लगाया था।। इसकी वैधता को चुनौती दी गई आैर इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने यू०पी० राज्य और अन्य (सुप्रा) ने इसकी वैधता को यथावत रखा गया था। त्तपश्चात उक्त निर्णय के संबंध में एक समीक्षा याचिका दायर की गई और सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड द्वारा 1980 की एक अन्य रिट याचिका संख्या 182 भी दायर की गई, जिसमें 31 अगस्त, 1979 की अधिसूचना को चुनौती दी गई, जिसके तहत मौजूदा नियम के स्थान पर, विक्रेता शुल्क लगाने का, एक नया नियम प्रस्तुत किया गया था। इसे चुनौती दी गई और सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड और अन्य में सात न्यायाधीशों की खंडपीठ ने प्रस्तर 82 में अपना निष्कर्ष दया कि यू.पी. अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधान और आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और बॉम्बे के समान अधिनियम "असंवैधानिक थे क्योंकि इनमें कर लगाने की बात कही गई थी या औद्योगिक अल्कोहल, अर्थात् प्रयुक्त अल्कोहल और औद्योगिक प्रयोजनों के लिए उपयोग योग्य पर अधिभार वसूलें।"

इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कि उदग्रहण असंवैधानिक था, जहां तक राहत का प्रश्न है, न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

"89. हमें यह अवश्य देखना है कि ये शुल्क और उदग्रहण सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड मामले में इस न्यायालय के निर्णय के आधार पर लगाए गए हैं। तमिलनाडु राज्य के मामले को छोड़कर राज्यों के साथ–साथ याचिकाकर्ताओं और निर्माताओं ने उस आधार पर अपने अधिकारो व परिस्थिति को समायोजित कर लिया है। मामले को ध्यान में रखते हुए, यह बताना आवश्यक होगा कि इन प्रावधानों को भविष्यलक्षी रूप से अवैध घोषित किया जाता है। *दूसरे शब्दों में, प्रतिवादी राज्यों को आगे कोइ भी उदग्रहण लागू करने से रोका गया है, लेकिन उत्तरदाता किसी भी प्रतिदाय के लिए उत्तरदायी नहीं होंगे और पहले से एकत्र और भुगतान किया गया कर वापस नहीं किया जाएगा।* हम भविष्यलक्षी रूप से इन धोखाधड़ी को अवैध और अमान्य घोषित करते हैं, परंतु पूर्व में की गई किसी भी वसूली को प्रभावित नहीं करते हैं। रिट याचिकाओ और अपीलों का निपटारा तदनुसार किया जाता है। तदनुसार, समीक्षा याचिकाएं सफल होती हैं, हालांकि सख्ती से ऐसा कोई आधार नहीं बनाया गया है, लेकिन हमने जो निर्णय लिया है, उसे देखते हुए सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड मामले में निर्णय को यथावत नहीं रखा जा सकता है। हमने जो विचार किया है, उसमें यह तय करना या निर्णय देना आवश्यक नहीं है कि उदग्रहण वैध है या नहीं, इसके लिए कौन उत्तरदायी होगा, यानी उत्पादक, निर्माता या डीलर।

90. 1978 की रिट याचिका संख्या 4051 (केमिकल्स एंड प्लास्टिक इंडिया लिमिटेड बनाम तमिलनाडु राज्य) के संबंध में, इस न्यायालय द्वारा 1 नवंबर, 1978, 1 सितंबर, 1986, 1 अक्टूबर, 1986, 10 अक्टूबर, 1986 को कुछ आदेश पारित किए गए थे। यह कहा गया था कि 1 मार्च, 1986 से कंपनी द्वारा उनकी कैप्टिव डिस्टिलरी में निर्मित शराब पर केंद्रीय उत्पाद शुल्क विभाग की वर्तमान मांग 4 करोड़ रुपये से अधिक है। इस न्यायालय ने 1 अक्टूबर, 1986 के अपने आदेश, जिसकी पुष्टि 16 अक्टूबर, 1986 को की थी, द्वारा राज्य सरकार को इक्विटी के समायोजन के अधीन कंपनी की कैप्टिव डिस्टिलरी में निर्मित शराब पर लेवी वसूलने की अनुमति दी थी और केंद्रीय उत्पाद शुल्क अधिकारियों को किसी भी उत्पाद शुल्क को इकट्ठा करने से रोक दिया था। ऐसी शराब अत: यह घोषित करना आवश्यक है कि भविष्य में राज्य सरकार द्वारा याचिकाकर्ताओं से इस संबंध में कोई और वसूली नहीं की जाएगी। जहां तक पूर्व में की गयी वसूली का प्रश्न है, हम निर्देश देते हैं कि निर्देश के उस हिस्से के लिए यह आवेदन, हमारे निर्णय के अनुसार राज्य सरकार और केंद्र सरकार दोनों को नोटिस दिये जाने पर निस्तारण के लिए एक डिवीजन पीठ के समक्ष रखा जाना चाहिए।

अपीलकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया है कि उक्त निर्णय के प्रस्तर 2 में यह घोषणा, कि उक्त अधिनियमों के आक्षेपित प्रावधान असंवैधानिक थे, इस न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत एक घोषणा थी। उपरोक्त पैराग्राफ 89 और 90 सुप्रा में निहित टिप्पणियों और निर्देशों ने अनुच्छेद 142 के तहत न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र के प्रयोग का संकेत दिया।

वर्तमान मामले में 25 अक्टूबर 1989 से पहले की अवधि के संबंध में, जब अपीलकर्ताओं के संबंध में दूसरे सिंथेटिक्स मामले का फैसला किया गया था, तो आक्षेपित अधिनियमों के तहत मांग उठाई गई थी और कुछ अवधि के लिए भुगतान किया गया था और अन्य अवधियों के संबंध में राज्य सरकारों को भुगतान नहीं किया गया था। अपीलकर्ताओं का तर्क यह है कि अनुच्छेद 89 में इस न्यायालय की टिप्पणियों के दृष्टिगत अपीलकर्ता पहले से भुगतान किए गए करों की वापसी का दावा करने के हकदार नहीं हो सकते हैं, लेकिन साथ ही, 25 अक्टूबर, 1989 से पहले की अवधि अर्थात जिस तारीख को फैसला सुनाया गया थ, के सम्बंध मे राज्य सरकार करों को एकत्रित करने की हकदार नहीं है। हालाँकि यह कथन किये गये थे कि उन मामलों में जहां राज्य के पास इस शर्त पर पैसा जमा किया गया था कि उसे एक पृथक खाते में रिट याचिका के नतीजे के अधीन रखा जाएगा, अपीलकर्ता उसे वापस पाने के हकदार होंगे। .

अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर.एफ. नरीमन ने सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ और अन्य(1) (पेज 430 पर) का हवाला दिया और तर्क दिया कि संविधान के

1. (1998)4 एस०सी०सी० 409,

अनुच्छेद 142 के तहत यह न्यायालय कोई भी आदेश पारित नहीं कर सकता है जो किसी भी संवैधानिक या वैधानिक प्रावधान के विपरीत है। सिंथेटिक्स मामले में निर्णय का प्रभाव यह है कि विवादित अधिनियम विधायी क्षमता के बिना थे और उन कानूनों को गैर–अस्तित्व में माना जाना चाहिए जैसे कि उनका अस्तित्व ही नहीं था। उक्त कानूनों की वैधता, जिसे पहले सिंथेटिक्स मामले में बरकरार रखा गया था, पहले सिंथेटिक्स मामले के खिलाफ समीक्षा याचिका स्वीकार किये जाने और सिंथेटिक्स मामले में कानून की घोषणा किये जाने के साथ समाप्त हो गई। उन्होंने तर्क दिया कि अनुच्छेद 89 में दिए गए निर्देश का उददेश्य अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए पूर्ण न्याय करना था और भविष्यवर्ती अधिनिर्णय के प्रभाव को उक्त अनुच्छेद में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया गया था जहां यह देखा गया था कि *"दूसरे शब्दों में, प्रतिवादी राज्य उक्त उदग्रहण को आगे लागू करने से रोक दिया जाता है, लेकिन उत्तरदाता किसी भी प्रतिदाय के लिए उत्तरदायी नहीं होंगे और पहले से एकत्र और भुगतान किया गया कर वापस नही किया जायेगा।"*

श्री नरीमन द्वारा यह भी तर्क दिया गया कि भारत में भविष्यलक्षी अधिनिर्णय के सिद्धांत को लागू करने का कोई न्यायशास्त्रीय आधार नहीं है। उन्होंने कथन किया कि इस सिद्धांत को प्रथम बार आई.सी. गोलक नाथ एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य(1) में लागू किया गया था। जहां मुख्य न्यायाधीश के. सुब्बा राव ने अपने और पांच अन्य न्यायाधीशों के लिए इस आशय के लिये एक अमेरिकी सिद्धांत का इस्तेमाल किया। श्री नरीमन ने तर्क दिया कि अन्य छह न्यायाधीशों ने इस पर सहमति नहीं दी और वास्तव में न्यायमूर्ति वांचू के फैसले के माध्यम से तीन न्यायाधीश स्पष्ट रूप से इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि संभावित ओवररूलिंग का सिद्धांत संविधान के अनुच्छेद 13 (2) के प्रावधानों के खिलाफ था। हमारी राय में हमारे लिए इस प्रश्न पर जाना न तो आवश्यक है और न ही उचित। हम केवल सिंथेटिक्स मामले में दूसरे फैसले की व्याख्या और प्रभाव के बारे में सम्बद्ध हैं, इसकी शुद्धता से नहीं।

श्री नरीमन द्वारा यह तर्क दिया गया कि उसके संबंध में पारित अंतरिम आदेश के परिणामस्वरूप न्यायालय में जो बिक्री शुल्क जमा किया गया था, उसमें स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया था कि उसे एक अलग खाते में रखा जाना चाहिए। इसलिए, उन्होंने कथन किया कि इसे एसे भुगतान के रूप में नहीं माना जा सकता है जिसके प्रतिदाय का अपीलकर्ता दूसरे सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स फैसले में उपरोक्त टिप्पणियों के कारण हकदार नहीं था। उन्होंने तर्क दिया कि यह निर्देश, कि राज्य द्वारा प्राप्त राशि को एक अलग खाते में रखा जाना चाहिए, अपीलकर्ताओं को उक्त राशि वापस पाने का अधिकार देता है, जब यह मान लिया गया है कि राज्य विधानमंडल के पास इस तरह

1. (1967)2 एस०सी०आर० 762,

की उदग्रहण लगाने के लिए विधायी क्षमता का अभाव है। उन्होंने आगे कहा कि किसी भी मामले में उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने में सही नही था कि कोई अन्यायपूर्ण संवर्धन हुआ था और इसलिए, प्रश्नगत उदग्रहण की कोई वापसी नहीं होनी चाहिए।

हिंदुस्तान पॉलिमर्स लिमिटेड की ओर से उपस्थित श्री सुनील गुप्ता ने अन्य वकील की दलीलों को दोहराते हुए आगे कहा कि बैंक गारंटी प्रस्तुत करना कर के भुगतान के समान नहीं है। उन्होंने हमारा ध्यान ओसवाल एग्रो मिल्स लिमिटेड और अन्य बनाम सहायक कलेक्टर, केंद्रीय उत्पाद शुल्क, डिवीजन लुधियाना और अन्य (1)के मामले में इस न्यायालय के फैसले की ओर आकर्षित किया। उस मामले में, उत्पाद शुल्क की वसूली पर रोक लगाने वाले इस न्यायालय द्वारा पारित एक अंतरिम आदेश के अनुसार एक बैंक गारंटी प्रस्तुत की गई थी। निर्धारिती की अपील स्वीकार कर ली गई और उसने बैंक गारंटी की वापसी का दावा किया जिसे उत्पाद शुल्क अधिकारियों ने पहले ही भुना लिया था। राजस्व ने तर्क दिया कि बैंक गारंटी को अदालत में जमा किए गए धन के बराबर माना जाना चाहिए और इस तरह उत्पाद शुल्क अधिनियम की धारा 11–बी लागू होती है और अपीलकर्ता संबंधित अधिकारियों के समक्ष यह स्थापित करने में विफल रहे हैं कि उन्होंने आगे नहीं बढ़ाया है। उसकी घटना ग्राहकों के लिए, अधिकारी बैंक गारंटी को भुनाने और उसकी राशि अपने पास रखने के हकदार थे। अपील को स्वीकार करते हुए और यह मानते हुए कि धारा 11–बी के प्रावधान बैंक गारंटी प्रस्तुत करने के मामले में लागू नहीं थे, इस न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

" 9. धारा 11–बी तब लागू होती है जब कोई निर्धारिती उत्पाद शुल्क की वापसी का दावा करता है। धनवापसी का दावा पुनर्भुगतान का दावा है। यह माना जाता है कि उत्पाद शुल्क की राशि का भुगतान आबकारी अधिकारीगण को कर दिया गया है। तब ही आबकारी अधिकारियों से उत्पाद शुल्क का भुगतान करें या उसे वापस करने की अपेक्षा की जायेगी।

10. इसलिए प्रश्न यह है कि क्या यह कहा जा सकता है कि न्यायालय के आदेश के अनुक्रम में विवादित उत्पाद शुल्क के सभी या भाग के लिए बैंक गारंटी दिया जाना उत्पाद शुल्क की राशि के भुगतान के बराबर है। हमारे विचार में इसका उत्तर नकारात्मक है। राजस्व के न्यायालय के समक्ष कार्यवाही, में सफल होने की स्थिति में राजस्व को सुरक्षित करने

के उद्देश्यों के न्यायालय ने, विवादित कर या शुल्क की मांग, रोक लगाने की शर्त के रूप में ,एक शर्त लगायी कि निर्धारिती ऐसी पूरी कर या शुल्क या उसके भाग की राशि के लिए बैंक गारंटी प्रदान करेगा। बैंक गारंटी देना या तो न्यायालय के प्रधान प्रशासनिक अधिकारी के पक्ष में या संबंधित राजस्व प्राधिकरण के पक्ष में देना अपेक्षित है। एसी स्थिति में कि राजस्व न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में विफल रहता है कर या

1. (1994)2 एस०सी०सी० 546,

शुल्क का भुगतान का प्रश्न जिसकी राशि बैंक गारंटी, के अंतर्गत आती है उत्पन्न नहीं होता है और, आम तौर पर, न्यायालय अपने आदेश के निश्कर्ष् पर यह निर्देश देता है कि बैंक गारंटी उन्मोचित हो जायेगी। जहां राजस्व सफल होता है कर की या शुल्क राशि निर्धारिती द्वारा राजस्व को देय हो जाती है और राजस्व के लिए यह खुला रहता है कि बैंक गारंटी का सहारा ले और उस पर भुगतान की मांग करे। बैंक गारंटी राजस्व के लिये प्रतिभूति है, जिसमें यदि राजस्व सफल होता है तो उसका बकाया वसूल किया जाएगा, जिसका बैंक की गारंटी से समर्थन किया जा रहा है। एसी स्थिति में, हालांकि संभावना नहीं है, बैंक अपनी गारंटी का सम्मान करने से इनकार करे , राजस्व या, जहां बैंक गारंटी न्यायालय के प्रधान प्रशासनिक अधिकारी के पक्ष में है उस अधिकारी के लिए यह आवश्यक होगा कि बैंक गारंटी पर देय राशि के लिए बैंक के खिलाफ मुकदमा दायर करे । इसलिए, विवादित कर या शुल्क की राशि जो बैंक गारंटी द्वारा सुरक्षित है, उसे राजस्व को भुगतान किये जाने के लिये नही कहा जा सकता । वहां वापसी का कोई प्रश्न नहीं है, और धारा 11–बी आकर्षित नहीं होती है।

जब इस न्यायालय ने *आई. सी. गोलक नाथ* के मामले में यह निर्णित किया कि संविधान के अनुच्छेद 368 के तहत संशोधन संसद को संविधान के भाग ।।। में मौलिक अधिकारों को कम करने की अनुमति नहीं देता है, इसने निर्णय को भविष्यलक्षी प्रभाव से प्रभावी बनाया। यह इस तथ्य की मान्यता में किया गया था कि 26 जनवरी 1950 को संविधान के लागू होने और निर्णय की तारीख के बीच, संसद ने वास्तव में संशोधन की शक्ति का इस तरह से प्रयोग किया था, जो गोलकनाथ में निर्णय के अनुसार शून्य था। यदि निर्णय को भूतलक्षी प्रभाव दिया जाती, तो "यह हमारे देश में अराजकता और अस्थिर स्थितियों की शुरुआत करेगा"। दूसरी ओर इसने यह भी माना कि अराजकता की ऐसी संभावना अधिनायकवादी शासन के विकल्प से बेहतर हो सकती है। इसलिए न्यायालय ने इस असाधारण स्थिति से निपटने के लिए कुछ उचित सिद्धांत विकसित करना की मांग की। जो उचित सिद्धांत विकसित करने का प्रयास किया । वह संभावित अधिनिर्णय का सिद्धांत था।

हालाँकि 'संभावित अधिनिर्णय' का सिद्धांत, अमेरिकी न्यायशास्त्र से लिया गया था, लेकिन इसमें स्वदेशी विशेषताओ का विकास करना आवश्यक था। शक्ति के मापदंडों को ,जहाँ तक इस देश का संबंध है, गोलकनाथ में ही निर्धारित करने की कोशिश की गई थी जब यह कहा गया थाः

" चूंकि इस न्यायालय को पहली बार अलग–अलग परिस्थितियों में एक अलग देश में विकसित सिद्धांत को लागू करने के लिए कहा गया है, इसलिए हम शुरुआत में युद्धरत तरीके से आगे बढ़ना चाहेंगे। हम निम्नलिखित सुझाव रखतें हेः(1) संभावित अधिनिर्णय के सिद्धांत को केवल हमारे संविधान के तहत उत्पन्न होने वाले मामलों में लागू किया जा सकता है। (2) इसे केवल देश के उच्च्तर न्यायालय यानी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लागू किया जा सकता है क्योंकि इसके पास भारत

के सभी न्यायालयों के लिए बाध्यकारी कानून घोषित करने का संवैधानिक अधिकार क्षेत्र है। (3) उच्चतम न्यायालय द्वारा अपने पहले के निर्णयों को निरस्त करते हुए घोषित कानून के भूतलक्षी संचालन का दायरा उसके विवेक पर छोड़

दिया जाता है कि उसे उसके सामने के कारण या मामले के न्याय के अनुसार ढाला जाए। व्यवहार में मापदंडों का पालन नहीं किया गया है।

'संभावित अधिनिर्णय' शब्दावली समान मुद्दे पर पूर्व न्यायिक निणर्य जो अन्यथा अंतिम थे की ओर संकेत करती है। यह इस प्रकार गोलकनाथ के मामले में समझा गया। हालाँकि, इस न्यायालय ने पहली बार किसी मुद्दे पर निर्णय लेते समय भी शक्ति का उपयोग किया है। इस प्रकार इंडिया सीमेंट लिमिटेड और अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य, जब इस न्यायालय ने अवधारित किया कि मद्रास पंचायत अधिनियम, 1958 की धारा 115 के तहत लगाया जाना चाहा गया उपकर, जैसा कि मद्रास अधिनियम 1964 का 18 में संशोधित किया गया है असंवैधानिक था, इसने न केवल तमिलनाडु राज्य को इसे आगे लागू करने से रोका, बल्कि यह भी निर्देश दिया कि पहले से भुगतान किए गए या एकत्र किए गए उपकर के किसी भी प्रतिदाय के लिए राज्य उत्तरदायी नहीं होगा।

उड़ीसा सीमेंट लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य ओर अन्य(1) में इस निर्देश पर विचार किया गया था । पृष्ठ 498 पर जहाँ यह अभिनिर्धारित किया गया था किः

"..... किसी प्रावधान की अवैधता के बारे में घोषणा और उस अनुतोष् का निर्धारण जो इसके परिणामस्वरूप दिया जाना चाहिए दो अलग–अलग चीजें हैं और बाद के क्षेत्र में, न्यायालय के पास ओर एक निश्चित मात्रा में विवेकाधिकार और होना चाहिए। यह एक अच्छी तरह से स्थापित प्रस्ताव है कि यह न्यायालय के लिए खुला है,
कि उसके समक्ष की परिस्थिति के लिये अनुतोष् को सबसे उपयुक्त तरीके से इस तरह से प्रदान करे ढाले या सीमित करें जिससे न्याय के हितों को आगे बढ़ाया जा सके।
इस बात की सराहना होगा कि सभी स्थितियों में किसी निष्कर्ष का तार्किक और पूर्ण प्रभाव देना हमेशा संभव नहीं होता है ..... '

पुनः भारत संघ और अन्य बनाम मोहम्मद रमजान खान (2)में यह अभिनिर्धारित किया कि किसी कर्मचारी को जांच रिपोर्ट की प्रति प्रस्तुत न करना प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है और ऐसी रिपोर्ट प्रस्तुत किए बिना कोइ भी अनुशासनात्मक कार्यवाही निरस्त होने योग्य थी । हालाँकि, यह स्पष्ट किया गया था कि इस मामले में निर्णय का भविष्यलक्षी प्रभाव होगा ताकि पहले से लगाई गई कोई भी सजा चुनौती देने के लिए खुली न हो।(प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल, हैदराबाद और अन्य बनाम बी. करुणाकर और अन्य भी देखें।
1.(1991)सप्ल० (1)एस०सी०सी० 430, 2.(1991) 1 एस०सी०सी० 588

अंतिम विश्लेषण में, संभावित अधिनिर्णय, शब्दावली के बावजूद, यह केवल इस सिद्धांत की मान्यता है कि न्यायालय मामले के न्याय को उददेश्य को प्राप्त करने के लिए दावा किये गये अनुतोष् को ढालती है–न्याय अपने तार्किक रूप से नहीं बल्कि अपने न्यायसंगत अर्थों में। जहाँ तक इस देश का संबंध है, संविधान के अनुच्छेद 142 द्वारा स्पष्ट रूप से शक्ति प्रदान की गई है जो इस न्यायालय को "उसके समक्ष लंबित किसी भी कारण या मामले में ऐसी डिक्री पारित करने या ऐसा आदेश देने की जो पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक है", अनुमति देता है इस शक्ति का प्रयोग करते हुए, इस न्यायालय ने 'पूर्ण न्याय' करने के लिए दावेदार के पक्ष में होने के बावजूद दावा किये गये अनुतोष् को अक्सर अस्वीकार कर दिया है।

इस संवैधानिक विवेकाधिकार को देखते हुए, यह शायद अनावश्यक था कि संभावित अधिनिर्णय के किसी भी सिद्धांत का सहारा ले, एक विचार जो नारायणबाई बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य में पृष्ठ 470 पर और अशोक कुमार गुप्ता और एक अन्य बनाम यू. पी. राज्य और अन्य (1) में व्यक्त किए गए। बाद के मामले में, "संभावित अधिनिर्णय के सिद्धांत" पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने कहा कि यह न्यायलयो द्वारा पक्षों के प्रतिस्पर्धी अधिकारों को समायोजित करने

के लिए विकसित की गई एक विधि थी ताकि संव्यवहार को सुरक्षित रखा जा सके "चाहे वैधानिक हो या अन्यथा, जो पहले के कानून द्वारा प्रभावित थे।" इस न्यायालय के अनुसार, यह "अनुचित रूप से उन लोगों के अधिकारों को प्रभावित किये बिना जिन्होंने पिछले कानून को निरस्त करने वाले निर्णय की तारीख से पहले संचालित कानून पर कार्य किया था, कानून के संचालन को सुचारू रूप से स्थानांतरित करने के लिए एक उपयोगी रूपरेखा के रूप में व्यावहारिकता और न्यायिक राजनीतिक कौशल के साथ न्यायिक शिल्प कौशल का नियम था।अंततः, यह इस न्यायालय के विवेक का प्रश्न है और इस कारण से, अनुतोष् देने वाले न्यायालय के शब्दों से सीधे संबंधित हैं।

दो पैराग्राफ 89 और 90 को एक साथ पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि इस न्यायालय का, प्रावधानो को भविष्यलक्षी रूप से अवैधानिक करने की घोषणा के सम्बन्ध में अर्थ् यह है कि यदि राज्य पहले से ही कर का संग्रह कर चुका है, वह उसे वापस करने के दायित्वाधीन नही है। वह राज्य है जो घोषणा के परिणाम से इस निष्कर्ष् पर कि आक्षेपित कानून मे योग्यता की कमी है सुरक्षित है, अन्यथा परिणाम यह होता कि कोइ भी संग्रह किया गया कर वापस करने योग्य हो जाता चूंकि कोइ राज्य उसको नही रख सकता क्योकि उदग्रहण कानून के प्राधिकार के बिना ओर संविधान के अनुच्छेद 265 के उल्लंघन में होता । साथ ही यह स्पष्ट रूप से निधार्रित किया गया कि राज्यो अग्रतर उदग्रहण् के प्रवर्तन से बाधित है। अनुच्छेद 265 मे 'उदग्रहण्' और 'संग्रह' हैं शब्द प्रयुक्त है। कराधान कानून में 'उदग्रहण्' और 'संग्रह' शब्द समानार्थी शब्द नहीं हैं, 1.(1997) 5 एस०सी०सी० 201

(कलकत्ता डिवीजन केंद्रीय उत्पाद शुल्क के सहायक कलेक्टर, बनाम नेशनल टोबैको कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड, (1) पृष्ठ 572 पर जबकि 'उदग्रहण्' का अर्थ होगा निर्धारण या कर लगाना या लागू करना, अनुच्छेद 265 में 'संग्रह' का अर्थ होगा उस कर की भौतिक प्राप्ति जो अधिरोपित या लगाया जाता है। कर का संग्रह आम तौर पर उसी के उद्ग्रहण के बाद का एक चरण होता है। उदग्रहण के प्रवर्तन का अर्थ केवल लगाए गए या मांगे गए कर की प्राप्ति हो सकती है। यह निर्णय के पैराग्राफ 90 से स्पष्ट है कि राज्यों को 25 अक्टूबर, 1989 से पहले की अवधि के संबंध में, कर की वसूली करने से रोका गया था, यदि पहले से ही प्राप्त नहीं किया गया था। उक्त प्रस्तर से पता चलता है कि निणर्य की तारीख पर ,1 मार्च, 1986 के बाद की अवधि के लिए केंद्रीय उत्पाद शुल्क विभाग द्वारा उत्पादित शराब पर 4 करोड़ रुपये से अधिक मांग की गई थी । न्यायालय ने 1 अक्टूबर, 1986 और 16 अक्टूबर, 1986 के अपने आदेशों का उल्लेख किया, जिसके तहत राज्य सरकार को कंपनी की कारखानों में निर्मित शराब पर शुल् एकत्र करने की अनुमति दी गई थी।

उक्त 4 करोड़ की राशि के संबंध में यह देखा गया कि "इसलिए, यह घोषणा करना आवश्यक है कि भविष्य में राज्य सरकार द्वारा याचिकाकर्ताओं से इस संबंध में आगे कोई प्राप्ति नहीं की जायेगी। इसका निहितार्थ स्पष्ट रूप से यह था कि अगर 4 करोड रुपये में से राज्य सरकार कुछ कर का संग्रह कर चुकी है, 25 अक्टूबर, 1989 के बाद बकाया राशि का संग्रह नहीं किया जा सकता है।

दूसरे सिंथेटिक्स मामले में निर्णय के बाद रिट याचिका संख्या 1981 का 7452 और 1982 का 3571–सच्चिद हुसैन और अन्य बनाम यू.पी. राज्य और अन्य – सुनवाई के लिए आए। मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति मुखर्जी, की अध्यक्षता में तीन न्यायाधीशों की एक पीठ जिन्होंने 26 फरवरी, 1990 के आदेश के माध्यम से दूसरे सिंथेटिक्स मामले में फैसला सुनाया था, ने उक्त रिट याचिकाओं का निपटारा करते हुए निम्नलिखित टिप्पणी कीः

" सिंथेटिक्स और केमिकल्स लिमिटेड और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1990] 1 एस. सी. सी 109, में इस न्यायालय के फैसले को देखते हुए रिट याचिकाओं को भविष्यलक्षी रूप से अनुमति दी जाती है और शुल्क भविष्यलक्षी रूप से ना वसूला जा सकने वाला घोषित किया जाता है चूंकि कोई धनवापसी का दावा नहीं गया है, इसलिए रिट याचिकाओं की प्रार्थना (1) और (2) के संदर्भ में एक आदेश होगा। आबकारी विभाग द्वारा याचिकाकर्ताओं के खिलाफ 68,200 की धनराशि के लिये जारी वसूली आदेश दिनांकित 14 सितम्बर 1981 खारिज कर दिया जाता है और

उत्तरदाताओं को, 9.4.75 से 11.7.78 तक की अवधि के लिए विक्रय शुल्क के सम्बन्ध में 68,200 रुपये राशि की वसूली याचिकाकर्ता से नहीं करने का निर्देश दिया जाता है ”

पुनः मुख्य न्यायाधीश मुखर्जी की अध्यक्षता वाली पीठ का 1981 की रिट याचिका संख्या 8435 यावर अली बनाम. यू. पी.राज्य और अन्य में इसी प्रभाव के लिए 12 मार्च, 1990 का एक और आदेश है। इन दो आदेशों द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य को 25 अक्टूबर, 1989 से पूर्व की तिथि पर वसूली नोटिस जारी किये जाने के बावजूद बकाया राशि की वसूली नहीं करने का निर्देश दिया गया था। यह दो आदेश महत्वपूर्ण है क्योंकि दूसरे सिंथेटिक्स मामलें मे निणर्य के लेखक द्वारा स्वयं के निर्णय में संभावित अधिनिर्णय को समझा कि इसका तात्पर्य है कि यदि 25 अक्टूबर, 1989 से पूर्व की अवधि के सम्बन्ध में उदग्रहण को आबकारी प्राधिकारीयो द्वारा वसूल नही किया गया है तब वसूली आदेश जारी किये जाने के बावजूद, राज्य धनराशि वसूल करने का हकदार नही है। यह कहा जा सकता है कि 1990 में मुख्य न्यायमूर्ति मुखर्जी, द्वारा दो साथी न्यायमूर्तिगण् के साथी अपने पूर्ववर्ती निर्णय की व्याख्या इस प्रकार व्याख्या की जो स्पष्टतया दर्शाता है कि दूसरे सिंथेटिक्स मामलें मे निर्णय का पैराग्राफ 89 राज्य को 25 अक्टूबर, 1989 से पूर्व की अवधि के सम्बन्ध में उदग्रहण को भोतिक रूप से प्राप्त करने का हकदार नही बनाता, हालांकि यह कहा जा सकता है कि उस तारीख से पहले का उदग्रहण, संभावित अधिनिर्णय के सिद्धांत के कारण अमान्य नहीं था। संभावित अधिनिर्णय का सिद्धांत *बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य और अन्य* मामले में लागू किया गया था। वहां विचार के लिए यह प्रश्न उठा कि क्या चीनी मिलों द्वारा गन्ना, चीनी और गुड़ की खरीद के लेनदेन के संबंध में बिहार कृषि उत्पादन बाजार अधिनियम, 1960 के अंतर्गत बाजार शुल्क लगाया जा सकता है। आवश्यक वस्तु अधिनियम के तहत जारी चीनी (नियंत्रण) आदेश, 1966 के साथ पठित बिहार गन्ना (आपूर्ति और खरीद विनियमन) अधिनियम, 1981 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, यह माना गया कि एक ओर गन्ना अधिनियम व गन्ना आदेश के प्रावधान व दूसरी ओर बिहार बाजार अधिनियम सामंजस्यपूर्ण ढंग से काम नहीं कर सका और इसलिए, गन्ना अधिनियम और गन्ना आदेश बाजार अधिनियम पर हावी हो गए। तब यह तर्क दिया गया कि अपीलकर्ताओं को बाजार शुल्क जो उनके द्वारा बाजार अधिनियम के तहत भुगतान किया था, को वापस पाने की अनुमति दी जानी चाहिए, बशर्ते कि वे यह दर्शित करे कि उन्होंने अन्यायपूर्ण संवर्धन के सिद्धांत पर बोझ नहीं डाला है। उपरोक्त तर्कों से पर विचार करते हुये यह अवधारित किया गया:

"112.....इन परिस्थितियों में, इन मामलों के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, हम भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए यह निर्देश देना उचित समझते हैं कि वर्तमान निर्णय का केवल भविष्यलक्षी प्रभाव होगा। अर्थात इस निर्णय की घोषणा के बाद बाजार क्षेत्रों में संबंधित चीनी कारखानों द्वारा गन्ने की खरीद के सभी भविष्य के लेनदेन और साथ ही इन करखानो द्वारा खरीदे गए गन्ने का उपयोग करके उत्पादित चीनी

और उससे उत्पादित गुड़ की बिक्री पर भी रोक नही लगायी जायेगी। इन फैक्ट्रियों द्वारा संबंधित बाजार समितियों द्वारा बाजार अधिनियम की धारा 27 के तहत बाजार शुल्क की वसूली नहीं की जाएगी। इस फैसले की तारीख तक सभी पिछले लेनदेन, जिन पर बाजार शुल्क वसूला गया है, इसके दायरे में नहीं आएंगे। निर्णय और इस निर्णय की तारीख से पहले इन पिछले लेनदेन पर एकत्रित बाजार शुल्क को किसी भी चीनी मिल को वापस करने की आवश्यकता नहीं होगी, जिन्होंने इन बाजार शुल्क का भुगतान किया होगा।

113. हालाँकि, इसमें एक शर्त जोड़ना होगी। यदि किसी बाजार समिति को उच्च न्यायालय में रिट याचिकाकर्ताओं से बाजार शुल्क वसूलने से रोका गया है या यदि उच्च न्यायालय में रिट जी याचिकाकर्ताओं में से किसी ने इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता के रूप में बाजार शुल्क के भुगतान पर रोक प्राप्क की हो, तो उस अवधि के लिए जिसके दौरान ऐसा स्थगन प्रभाव में रहा प्और परिणामस्वरूप ऐसे स्थगन आदेशों के अंतर्गत आने वाले लेनदेन पर बाजार शुल्क अदा नहीं किया गया पर भुगतान किया गया इस फैसले की तारीख के बाद संबंधित बाजार समिति के लिए संबंधित चीनी मिल से ऐसे पिछले लेनदेन के लिए बाजार शुल्क वसूलने का कोई अवसर नहीं रहेगा। दूसरे शब्दों में, पूर्व में अदा किया गया बाजार शुल्क वापस नहीं किया जाएगा। इसी प्रकार पूर्व में वसूल न किया गया बाजार शुल्क भी इसके बाद वसूल नहीं किया जाएगा। चीनी मामलों के इस समूह में उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय पूर्वोक्त रूप से रद्द किये जाते है। इस न्यायालय के समक्ष सीधे दायर की गई रिट याचिका को भी उपरोक्त शर्तों के अनुसार स्वीकार किया जायेगो।"

उपरोक्त टिप्पणियाँ स्पष्ट करती हैं कि दूसरे सिंथेटिक्स मामले के प्रस्तर 89 में क्या निहित था, अर्थात्, जहां निर्धारिती द्वारा प्राप्त किए जाने के कारण स्थगन के कारण, निर्णय की घोषणा से पहले की अवधि के लिए बाजार समिति को वास्तव में भुगतान नहीं किया गया है, बाज़ार समिति उस बाज़ार शुल्क को वसूलने की हकदार नहीं थी, जिसके भुगतान पर रोक लगा दी गई थी। *बेलसुंड शुगर कंपनी लिमिटेड* के मामले (सुप्रा) में यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि "दूसरे शब्दों में पूर्व में भुगतान की गई बाजार शुल्क वापस नहीं किया जाना था। इसी तरह पूर्व में एकत्र नहीं की गई बाजार फीस को इसके बाद एकत्र नहीं किया जाना था।" ये टिप्पणियाँ दूसरे सिंथेटिक्स मामले में फैसले के प्रस्तर 89 में दिए गए निर्देशों के अनुरूप हैं और उक्त सिद्धांतों को वर्तमान अपीलों पर लागू करने से एकमात्र निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह न्यायालय वास्तविक भुगतान या उदग्रहण के संबंध में 25 अक्टूबर, 1989 की यथास्थिति का बनाए रखना चाहता है। सरकार के खजाने में जो कुछ भी गया था, चाहे वह किसी शर्त के साथ हो या बिना, उसे उसके पास ही रहना था और जो नहीं मिला, वह सरकार द्वारा वसूला नही जा सकता।

यह निश्चित रूप से सत्य है कि उसी अवधि के संबंध में, यानी 25 अक्टूबर, 1989 से पहले जिन व्यक्तियों ने स्थगन आदेश प्राप्त कर लिया था या अन्यथा उदग्रहण का भुगतान नहीं किया था, वे उन लोगों की तुलना में बेहतर स्थिति में होंगे जिन्होंने सरकार के पास रकम जमा कर दी है और वे कोई भी रिफंड प्राप्त करने के हकदार नहीं हैं। हालाँकि, यह स्थिति इस साधारण कारण से अपरिहार्य है कि अनुच्छेद 265 कानून के अधिकार के बिना कर संग्रह की अनुमति नहीं देता है। यद्यपि 25 अक्टूबर, 1989 से पूर्व का उदग्रहण वैध हो सकता है, लेकिन जब वास्तव में उक्त उदग्रहण के अनुसार कोई संग्रह नहीं किया गया था, तो दूसरे सिंथेटिक्स मामले में निर्णय के बाद वसूली की अनुमति नहीं थी। 25 अक्टूबर, 1989 के बाद कोई वैध कानून अस्तित्व में नहीं था जो कर संग्रहण की अनुमति देता हो। श्री वेणुगोपाल का यह तर्क सही है कि 25 अक्टूबर, 1989 के बाद उ.प्र. उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1910 की धारा 39 के प्रावधान जो उत्पाद शुल्क राजस्व की वसूली का प्रावधान करता है, लागू नहीं होगा। उक्त धारा में अन्य बातों के साथ–साथ कहा गया है कि सभी उत्पाद शुल्क राजस्व, उस व्यक्ति से जो मुख्य रूप से भू–राजस्व के बकाया के रूप में भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, से वसूल किया जा सकता है या उस समय लागू किसी कानून द्वारा सार्वजनिक मांगों की वसूली के लिए प्रदान की गई प्रक्रिया में। धारा 3(1) "उत्पाद शुल्क राजस्व" को परिभाषित करती है, जिसका अर्थ है किसी भी शुल्क से प्राप्त या व्युत्पन्न राजस्व, यदि कर आदि अधिनियम या किसी अन्य कानून के प्रावधानों के तहत लगाए या आदेशित किए गए हों। धारा 3(3ए) "उत्पाद शुल्क" और "प्रतिसंतुलन शुल्क" को परिभाषित करती है, जिसका अर्थ ऐसे किसी भी उत्पाद शुल्क या प्रतिसंतुलन शुल्क से है, जैसा कि संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची ।। की प्रविष्टि 51 में उल्लिखित किया जा सकता है। यूपी उत्पाद शुल्क अधिनियम के तहत औद्योगिक अल्कोहल पर

कोई उत्पाद शुल्क नहीं लगाया जा सकता क्योंकि यह सातवीं अनुसूची की सूची ।। की प्रविष्टि 51 के दायरे से बाहर होगा। बिक्री शुल्क को औद्योगिक शराब पर उत्पाद शुल्क के रूप में माना जा रहा है, जो सूची ।। की प्रविष्टि 51 के अंतर्गत नहीं आने के कारण वैध नहीं है, इसे उत्पाद शुल्क राजस्व नहीं माना जा सकता है और इसलिए, कम से कम 25 अक्टूबर, 1989 के बाद यह कर धारा 39 उ.प्र. उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1910 के दायरे से बाहर होने के कारण अप्राप्य हो जाएगा। यह स्थिति स्पष्ट रूप से न्यायालय द्वारा यू.पी. अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों, जहां तक वह औद्योगिक अल्कोहल पर उत्पाद शुल्क लगाने को सक्षम बनाता है, को अधिकार क्षेत्र से बाहर माने जाने की घोषणा के परिणामस्वरूप होगी।

इसके अलावा ओसवाल डी एग्रो मिल्स लिमिटेड मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा कानून की व्याख्या के दृष्टिगत, बैंक गारंटी को उत्पाद शुल्क उदग्रहण का भुगतान, जिसे सरकार बनाए

रखने की हकदार है, नहीं माना जा सकता। सामान्य रूप से बकाया राशि की वसूली सुनिश्चित करने के लिए बैंक गारंटी प्रस्तुत करने का आदेश दिया जाता है। हालाँकि, जहाँ, वर्तमान मामले की तरह, राज्य को 25 अक्टूबर, 1989 के बाद बिक्री शुल्क एकत्र करने या वसूलने का हकदार नहीं माना गया है, उसे बैंक गारंटी लागू करने और बिक्री शुल्क की राशि वसूलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। जो कार्य प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता वह अप्रत्यक्ष रूप से भी नहीं किया जा सकता। बैंक गारंटी प्रस्तुत करना बैंक द्वारा लाभार्थी को बैंक गारंटी में निहित कुछ परिस्थितियों में राशि का भुगतान करने का केवल एक वादा है। बैंक गारंटी प्रस्तुत करना भुगतान करने के बराबर नहीं हो सकता है क्योंकि बैंक गारंटी विक्रेता शुल्क के भुगतान से बचने के लिए जारी किया गया था। दूसरे शब्दों में, उत्तरदाता 25 अक्टूबर 1989 से पहले की अवधि के संबंध में बैंक गारंटी भुनाने और बिक्री शुल्क वसूलने के हकदार नहीं हैं।

यह सत्य है कि विधायी क्षमता के बिना एक कानून का प्रभाव यह है कि वह नहीं है [देखें: *बेहराम खुर्शीद पेसिकाका बनाम बॉम्बे राज्य 652, 653, आर.एम.डी.(1)। चमारबागवाला वि. 'द यूनियन ऑफ इंडिया' 940, (2) एम.पी.वी सुंदररामियर एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य, (सुप्रा) एट 1468 और महेंद्र लाल जैनी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य(3)*

विधायी क्षमता के बिना अधिनियमित कोई कानून तब तक क़ानून की किताब में बना रहता है जब तक कि सक्षम क्षेत्राधिकार वाला न्यायालय उस पर निर्णय नहीं दे देता और उसे शून्य घोषित नहीं कर देता। जब न्यायालय इसे शून्य घोषित कर देता है तभी यह कहा जा सकता है कि यह सभी उद्देश्यों के लिए शून्य है। सिंथेटिक्स और केमिकल्स मामले में प्रावधानों की अमान्यता संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत एक घोषणा थी। न्यायालय द्वारा पूर्ण न्याय करने के लिए अनुच्छेद 142 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अनुतोष को इस तरह से ढाला कि उसकी घोषणा को भविष्यलक्षी रूप से प्रभावी किया जा सके। यह स्वीकार करना संभव नहीं है कि संभावित अधिर्निर्णय का ऐसा आदेश विधि के विरूद्ध है। एक अमान्य कानून को वैध नहीं माना गया है। जो हुआ वह यह है कि कानून की अमान्यता की घोषणा को भविष्य की तारीख से प्रभावी होने का निर्देश दिया गया।

संभावित अति–निर्णय का सिद्धांत हमारे न्यायशास्त्र में इतनी अच्छी तरह से स्थापित है कि इसे परेशान करना संभव नहीं है। इसलिए, डी दूसरे सिंथेटिक्स मामले में निर्णय के कारण वास्तव में जो हुआ वह 25 अक्टूबर, 1989 से पहले बिक्री शुल्क का संग्रह और गैर–संग्रहण अछूता रह गया है।

1 [1955] 1 एससीआर 613। 2 [1957] एससीआर 930. 3 ¼1963) पूरक 1 एससीआर 912. 3.

937–941.]

हालाँकि, दूसरे सिंथेटिक्स मामले में न्यायालय ने विशेष रूप से न्यायालयों के अंतरिम आदेशों के अनुसार की गई जमा राशि के प्रश्न पर विचार नहीं किया। वहां प्रयुक्त शब्द था 'बोध'। यह तर्कपूर्ण हो सकता है कि 'जमा' उस अर्थ में 'प्राप्ति' नहीं थी, जिस अर्थ में इस शब्द का उपयोग सामान्य रूप से कराधान क़ानूनों और विशेष रूप से यू.पी. उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1910 में किया गया है। हालाँकि, उच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेशों से पता चलता है कि जमा वेंड शुल्क और खरीद कर से किया गया था। हालाँकि इन 'जमाओं' को एक अलग खाते में रखा जाना था, फिर भी इस मामले की परिस्थितियों में, यह मानना महज कुतर्क होगा कि जमा की गई धनराशि यू.पी. के प्रयोजनों के लिए 'प्राप्तियाँ' नहीं थीं। उत्पाद शुल्क अधिनियम. इसलिए, अपीलकर्ताओं द्वारा राज्य के पास जो जमा किया गया था, वह अंतरिम आदेशों के बावजूद उसके पास रहेगा, जिसके लिए राज्य को इसे एक अलग खाते में रखने की आवश्यकता थी, लेकिन साथ ही, जो राज्य द्वारा एकत्र नहीं किया गया है, उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह, उन मामलों में भी जहां बैंक गारंटी प्रस्तुत की गई थी।

अंत में, मफतलाल इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य बनाम यूनियन भारत और अन्य(1) का सहारा लेते हुए के, श्री द्विवेदी ने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ताओं को एहसास हो गया था उस आंकड़े को ध्यान में रखते हुए देय विक्रेता शुल्क की राशि उनके विक्रय मूल्य का निर्धारण करना और इसलिए, राज्य इसकी वसूली का हकदार है अन्यथा इससे अपीलकर्ताओं को अन्यायपूर्ण लाभ होगा।

मफतलाल के मामले (सुप्रा) में अन्यायपूर्ण संवर्धन के सिद्धांत को लागू किया गया था क्योंकि भुगतान की गई उत्पाद शुल्क की राशि पहले ही वसूल किये जाने के बाद भी रिफंड का दावा किया गया था। इस सिद्धांत के परिणामस्वरूप न्यायालय ने रिफंड का आदेश पारित करने से इनकार कर दिया। दूसरे सिंथेटिक्स मामले (सुप्रा) में दिए गए निर्देश के मद्देनजर कि कोई रिफंड नहीं दिया जाएगा, वर्तमान मामले में अन्यायपूर्ण संवर्धन का सिद्धांत लागू नहीं होता है। यह अन्यायपूर्ण संवर्धन के सिद्धांत के अनुरूप है। परंतु उस सिद्धांत को क़ानून के रद्द होने के उपरांत राज्य को बिक्री शुल्क वसूलने या वसूलने का अधिकार देने के लिए विस्तारित नहीं किया जा सकता है और यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि "प्रतिवादी राज्यों को उक्त उदग्रहण को आगे लागू करने से रोका जाता है... ". इसलिए, उत्तरदाताओं का उपरोक्त तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह इस तथ्य से अलग है कि ऐसा कोई तथ्यात्मक आधार नहीं है जिसके आधार पर यह न्यायालय इय निष्कर्ष पर पहुँच सके कि अपीलकर्ताओं द्वारा वास्तव में विक्रेता शुल्क की राशि वसूल कर ली गयी और उन्हें इसे रखने की अनुमति देने से वे अन्यायपूर्ण तरीके से समृद्ध हो जाएंगे।

1–(1997) 5 एससीसी 536

उपरोक्त कारणों से 1991 के सी.ए. नंबर 4093 स्वीकार की जाती है। 2001 की सिविल अपील संख्या 2853 खारिज की जाती है। यह घोषित किया जाता है कि राज्यों द्वारा वसूला गया बिक्री शुल्क अपीलकर्ताओं को वापस नहीं किया जाएगा और साथ ही, राज्य 25 अक्टूबर, 1989 से पूर्व या उसके बाद की अवधि के लिए कोई बिक्री शुल्क एकत्र नहीं कर सकता है, भले ही मांग के नोटिस जारी कर दये गये हो या वसूली की कार्यवाही शुरू कर दी गई हो। पक्षकार अपना खर्च स्वयं वहन करें।

1981 का सी.ए. संख्या 324, 1980 का 455, 2795, 1604, 1981 का 624, 625, 125, 2049, 1981 का सी.ए. संख्या 1122, 181, 1980 की एसएलपी (सी) संख्या 4181, 4297–4298, 1981 की सी.ए. संख्या 215, 341, 1989 की टी.सी. संख्या 37–39, 1989, 1981 का सी.ए. संख्या 2777 और 1980 का 1607।

इन अपीलों में सोमैया के मामले (1991 की सिविल अपील संख्या 4093) में फैसले द्वारा तय किए गए बिंदुओं के अलावा, जो मुद्दे सामने आते हैं उनमें से एक राज्य द्वारा लगाए जाने और वसूले जाने वाले निर्यात पास शुल्क की वैधता से संबंधित है। पक्षकारो के अधिवक्ता इस बात से सहमत हैं कि यह और अन्य मुद्दे, जो सोमैया के मामले में फैसले में शामिल नहीं थे, अब एक उचित पीठ द्वारा तय किये जा सकते है।

1973 के डब्ल्यूपी (सी) नंबर 1892 में आइ.ए. नंबर 1 और 3

डब्ल्यू.पी. (सी) संख्या 1892 में आइ.ए. संख्या 1 और 3 को खारिज कर दिया गया।

रूमा पाल, जे हालांकि मैं अपने विद्वान भाई किरपाल जे. द्वारा दिये गये तर्को एवं निष्कर्ष से सहमत हूं मैं 'भविष्यलक्षी विनिर्णय ' के पहलू पर, जिसे सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड और अन्य बनाम यूपी राज्य और अन्य, [1990] 1 एससीसी 109 में इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा प्रभावी किये जाने की मांग की गई थी, अपने विचार जोड़ना चाहती हूं।

अपीलकर्ता के तर्कों में से एक, जैसा कि मेरे विद्वान भाई ने नोट किया था, यह था कि *सिंथेटिक के मामले* में न्यायालय ने संभावित अधिनिर्णय का सहारा लेकर वास्तव में निर्णय की अवधि तक एक कानून, जिसे कानून ने बिना योग्यता के पारित किया गया माना था, को बरकरार रखना चाहा था। यह तर्क प्रस्तुत किया कि यह निष्कर्ष कि राज्य औद्योगिक अल्कोहल पर कर लगाने में सक्षम नहीं थे, इसका अर्थ यह था कि राज्य अधिनियम अस्थाई थे और न्यायालय अपने निर्णय को भविष्यलक्षी प्रभाव देकर, निर्णय की तारीख तक एक मृत क़ानून में जान नहीं डाल सकता था। अपीलकर्ता द्वारा यह भी तर्क दिया गया कि अनुच्छेद 142 के तहत भी, न्यायालय किसी भी संवैधानिक प्रावधान को कम नहीं कर सकता या उसके विरूद्ध कार्य नहीं कर सकता। अपीलकर्ता के अनुसार, यह घोषित करके कि क़ानून फैसले की तारीख तक वैध था, विशिष्ट संवैधानिक प्रावधानों, अर्थात् अनुच्छेद 246 और अनुच्छेद 245 का उल्लंघन किया गया था। *प्रेम चंद गर्ग बनाम एक्साइज कमिश्नर यू.पी., इलाहाबाद*, [1963] 1 एससीआर 885 और *सुप्रीम कोर्ट बार डी एसोसिएशन बनाम भारत संघ और अन्य* [1998] 4 एससीसी 409 मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया गया है। अपीलकर्ता का तर्क संभावित अधिनिर्णय के प्रभाव की गलतफहमी पर आगे बढ़ता है। जैसा कि मेरे विद्वान भाई के निर्णय में विस्तार से कहा गया है, संभावित अधिनिर्णय द्वारा न्यायालय दावेदार के पक्ष में निर्णय लेने के बाद भी दावा की गई राहत नहीं देता है। इस मामले में, न्यायालय ने माना कि विक्रेता शुल्क लगाने वाला वैधानिक प्रावधान अमान्य था। सख्ती से कहा जाये तो, इससे अपीलकर्ता को उत्तरदाताओं से विक्रेता शुल्क के रूप में एकत्र की गई सभी राशि के धनवापसी का अधिकार मिल जाता। लेकिन क्योंकि, जैसा कि *सिंथेटिक्स निर्णय* में ही कहा गया है, समय के साथ पहले के फैसले के आधार पर शुल्क और उदग्रहण लगाया गया था और राज्यों के साथ–साथ याचिकाकर्ताओं और निर्माताओं ने उस आधार पर अपने अधिकारों और अपनी स्थिति को समायोजित किया था, इस राहत से इनकार कर दिया गया। न्यायालय ने राहत से इनकार करके, जो अवैध या शून्य घोषित किया गया था, उसे अधिकृत या मान्य नहीं किया और न ही फैसले की तारीख तक विधायिका को सक्षम बनाया।

सीए। क्रमांक 4093/91 की स्वीकार।

सीए। क्रमांक 2853/2001, खारिज।

आइ ए, नंबर 1 और 3 डब्ल्यू.पी. में (ग) क्रमांक 1892/73 निस्तारित